Nibandha Mala*(UGC CARE Journal)*
ISSN 2277-2359
Vol-12-Issue-02
February 2020
Copyright©authors

थर्ड जेंडर : अस्मिता–संघर्ष

प्रा. नयन भादुले–राजमाने
गोविंदलाल कन्हैयालाल जोशी रात्रीचे वाणिज्य महाविद्यालय, लातूर
मो.न. 8805426071
bhadulenayan13@gmail.com

हमारी भारतीय संस्कृति उदार तो है लेकिन समाज में एक दोहरापन है, जो सदियों से लिंग के आधार पर सामाजिक अधिकार तय करता आ रहा है। स्त्रीलिंग और पुल्लिंग इन दोनों को सामाजिक संरचना की धुरी माना गया है। ये भी सही है कि ये दोनों मिलकर जीवन का सृजन करते हैं। किंतु इन दोनों लिंगो के शिवाय एक और लिंग है, जिसे स्वीकार करने समाज हिचकिचाता है। जहां तक भारतीय समाज की बात है तो उसने इस तीसरे लिंग को धर्म, आशीश और भय से जोड़ दिया। उसे सहज नहीं रहने दिया। एक ऐसा प्राणी, जो दिखता तो मनुष्यों की तरह है, किंतु उसे सामान्य मनुष्यों की तरह जीने का अधिकार नहीं दिया गया। उसे मजबुर किया गया कि वह यदि घरों में आता है तो तालियॉ बजाते हुए आए। भड़कीले मेकअप से पुता रहे और दुआएँ देकर जाए। इसमें समाज ने एक भय भी पाला हैं कि यदि वह तीसरा मानवीय प्राणी नाराज़ हो गया तो बददुआएं देकर जाएगा, इसलिए उसे खुष रखा जाए। उसे खुष रखने के लिए, उससे दुआएं लेने के लिए उसे चंद रुपये पकडा दिए जाएं। इन सब में सकारात्मक पक्ष यह है कि यही विचार उस तीसरे मानवीय प्राणी को संघर्ष की प्रेरणा दे रहा है। जिसमें विचार है, संवेदना है, वह सदा–सदा के लिए षोशित अथवा उपेक्षित नहीं रह सकता है। एक न एक दिन वह सिर उठाता है, आगे बढता है और समाज से अपना अधिकार मांगाता है।

इनके लिए बहोत ही अटपटे से संबोधन है, जैसे, किन्नर, छक्का, हिज़डा, बृहन्नला, उभयलिंगी, ख्वाजासर, ट्रांसजेंडर, खोजवा, खुसर, नपुंसक, खिचडी,इंटरसेक्स, ट्रांससेक्सुअल इत्यादी। इससे तो लिंगानुसार 'थर्ड जेंडर' कहा जाना सर्वथा उचित लगता है। सारी दुनिया में 'थर्ड जेंडर' अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करते दिखाई दे रहे हैं। अभी तक थर्ड जेंडर को अनेक प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास हुआ। सामान्य तौर पर जो लैंगिक रुप से न तो नर होते हैं और न मादा, उन्हें ही हिजड़ा या किन्नर कहा जाता है। विजेंद्र प्रताप सिंह ने 'थर्ड जेंडर' को परिभाषित करते हुए लिखा है, 'अर्थ की दृष्टि से देखे तो बुनियादी स्तर पर ट्रांसजेंडर, ट्राससेक्सुअल, एंड्रोगायन तथा कोथिस को

इस प्रकार पाते हैं –एक ट्रासजेंडर वह व्यक्ति है, जिसे जन्म के समय गुप्तांग के रुप में एक लिंग प्राप्त होता है, परंतु वह लिंग झूठा प्रतिनिधित्व लगता है, अर्थात वह यदि पुरुष लिंग के साथ होता भी तो उसके अंदर भावनाएं स्त्री की होती हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि शरीर तो स्त्री का होता है, परंतु हाव–भाव पुरुष या महिला के बीच असंदिग्ध रुप से झूलती रहती है, 'भारत में हिजड़ों के सात घराने माने जाते है, मुंबई, पुणे और हैद्राबाद जैसे अधिक जनसंख्यावाले शहरों में इनके केंद्र स्थापित है।''[1]

वैश्विक परिदृश्य में देखे तो 'थर्ड जेंडर' समुदाय ने अपने मानवीय अधिकारों को प्राप्त करने हेतु लंबी लड़ाई है। अमेरिका, इंग्लैंड, जर्मनी, कनाडा, ऑस्टलिया, नीदरलैंड, अर्जेन्टीना, पाकिस्तान, नेपाल आदि देशों में यह वर्ग तीसरे लिंग के रुप में पहचान प्राप्त कर चुका है। दरअसल इन देशों में इस समुदाय को सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक संवेदनात्मक सम्बल मिला। भारत में इस संदर्भ में काफी अभाव है। 23–24 जुलाई, 2016 को हिंदी भवन भोपाल द्वारा समकालिन उपन्यासों में थर्ड जेंडर की सामाजिक उपस्थिती' विशय पर आयोजित व्याख्यानमाला में डॉ. शरद सिंह ने कहा कि 'इस मंच से थर्ड जेंडर विमर्श को आरंभ किए जाने की घोषणा करती हूॅ। थर्ड जेंडर को सामाजिक समानता के अधिकार दिलाने में साहित्य महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है और आवश्यकता है ऐसे साहित्य पर एक स्वतंत्र विमर्ष की'[2] उल्लेखनीय है कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश (15 अप्रैल 2015) के बाद ही 'थर्ड जेंडर' समुदाय के मानवीय अधिकारों की ओर ध्यान आकर्षित हुआ। सर्वोच्च आदलत ने इस निर्णय में गे, लेस्बियन एवं बाचसेक्सुअल को 'थर्ड जेंडर' नहीं माना, बल्कि ट्रांसजेंडर को ही थर्ड जेंडर के रुप में पहचान दी।

समाज का ध्यान इस ओर नहीं जाता है कि ये भी समाज का अभिन्न अंग है। इन्हें भी वे सारे अधिकार मिलने चाहिए, जो एक स्त्री या पुरुष को मिलते हैं। इसमें सबसे पहली बात तो यह है कि माता–पिता का प्रेम और परिवार में सामाजिक स्वीकृति।

ये किन्नर जब शादी या बच्चे के जन्म पर घरों में नाचते हैं तो 'गुड लक' आता है ऐसा माना जाता है तो फिर इन्हें हाशिए पर क्यों रखा गया हैं? वैसे तो किन्नर आमतौर पर बेरोजगार ही होते हैं, उन्हें कोई ढंग का काम नहीं दिया जाता। इसलिए अपनी जरुरतों को पूरा करने के लिए उन्हें भीख मांगनी पडती है। या फिर प्रॉस्टीटयूशन का सहारा लेना पडता है।

थर्ड जेंडर समुदाय के प्रति तमाम तरह के पूर्वग्रह तो है ही। कहना होगा कि ये पूर्वग्रह निरंतर कानूनी उपेक्षा के चलते ही अपना विकराल रुप ले चुके थे। अपनी

अस्मिता के लिए जूझ रहे समुदायों के लिए कानूनी सुरक्षा बेहद महत्त्वपूर्ण है। कानूनी सुरक्षा मिलने के बाद पीड़ित समुदाय का मनोविज्ञान पूरी तरह परिवर्तित हो जाता है। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी के कथन में सुप्रीम कोर्ट के फैसले से पूर्व और बाद की मनोस्थिति को देखा जा सकता है, मैं जब फैसले से पूर्व कोर्ट में दाखिल हो रही थी, तब मुझे बहुत सारी नजरों की रत्ती भर चिंता नहीं थी, क्यों कि अब मेरे हाथ में वे तमाम अधिकार है, जिनका हमें बहुत लम्बे समय से इंतजार था।[3]

मानवधिकार संगठनो की मांग पर विश्व के कई देशों में किन्नरों की भलाई के लिए कानून बनाए जा रहे हैं और सामाजिक रुढ़ियों को तोड़ने का भरपूर प्रयास किया जा रहा है।

हमारे देश के संविधान में भी सभी नागरिकों के लिए समान अधिकारों का प्रावधान है। प्रत्येक नागरिक को बिना किसी भेदभाव के सारे अधिकार प्राप्त है, जो संविधान में बताए गए है। किन्नरों को इन अधिकारों से लिंग की वजह से वंचित नहीं किया जा सकता।

दरअसल एक दुसरी बात भी सामने आ रही है कि तेरह—चौदह साल से लेकर चौवीस—पच्चीस साल तक की उम्र के लडकों का उनके रंग, रुप, कद—काठी और मिजाज के अनुसार उपयोग किया जाता है, समलैंगिक संबंधों से लेकर नाचने—गाने तक और यह सारी व्यवस्था किन्नरों के समानान्तर चलाई जा रही है। लिंगोच्छेदन कर बनाए गए किन्नरों को 'छिबरा' और नकली किन्नर बने मर्दो को 'अबुआ' कहते है।

किन्नरों की चार शाखाएं होती हैं, 'बुचरा', 'नीलिमा', 'मनसा' और 'हॅसा'। 'बुचरा' जन्मजात हिजड़ा होते है। 'नीलिमा' स्वयं बने, 'मनसा' स्वेच्छा से शामिल तथा हॅसा' शारीरिक कमी के कारण बने किन्नर है।

असली किन्नरों की तुलना में नकली किन्नरों की तादाद बढ़ती जा रही है। वे सब मर्द या स्त्री है। कई एक तो बाल बच्चेदार हैं, पर पैसा कमाने के लिए उन्हें किन्नर बनने से भी कोई परहेज नहीं है। असली किन्नर, जिन्हें प्रकृति का दर्द मिला है, जो अपने परिवार से अलगहोकर विस्थापन की पीड़ा को अपने हदय में सहते है, समाज में दर—दर भटकते हैं, अपना हक मांगते हैं उनकी तादाद बहुत कम हैं। कभी दो—चार रुपयों के लिए मेले—ठेले में भीख मांगने नहीं घूमते है। पैसा न मिलने पर किसी को कोसते नहीं है और न ही लड़ाई—झगड़ा करते है। जिसने प्रेम से दे दिया, ले लिया।

शिक्षा की कमी, अन्य व्यवसाय में जुड़ने के सीमित अवसर, आर्थिक तंगी व परिवार का भावनात्मक लगाव न होता ही अधिकांश किन्नरों को यौन कर्म की ओर ले जाता है। लोगों की सोच में यह रचा–बसा है कि सारे किन्नर यौन कर्मी हैं, जो गलत है। इसी कारण इन्हें देखने, समझने व पटखने के लिए अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त होना पड़ेगा।

इस वर्ग के विकास, शिक्षा, स्वास्थ, सुरक्षा आदि के बारे में कोई व्यवस्था नहीं है। यह इस ओर इशारा करता है कि न केवल भारत, बल्कि वैश्विक स्तर पर नीति निर्माता, विकास की गति को तय करने वाले भी इस वर्ग को मनुष्य की श्रेणी में नहीं गिनते हैं। यदि इन्हें मनुष्य माना जाता तो शिक्षा, स्वास्थ, विकास, सुरक्षा आदि की चिंता और इन्तजाम की ओर सरकार और समाज पहलकदमी करते दिखाई देते।

'थर्ड जेंडर' के रुप में कानुनी स्वीकती दिनांक 15 अप्रैल 2014 को मिली। यह एक ऐतिहासिक फैसला था। इस फैसले के बाद किन्नर अधिकारों की कार्यकर्ता लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी ने प्रसन्नता तो प्रकट की, लेकिन साथ में इसे एक शुरुवात कहा था। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी ने कहा था, 'हम कोर्ट के इस ऐजिहासिक फैसले से खुश हैं। क्यों कि कोर्ट ने हमें भी महिला–पुरुषों की तरह अधिकार दिए हैं, लेकिन इस तीसरे लैंगिक समूह को समानता और बराबरी के लिए अभी भी एक लंबा रास्ता तया करना है।[4]

निर्विवाद रुप से थर्ड जेंडर समाज प्राचीन काल से ही अनेक समस्याओं से ग्रस्त रहा है। अस्मिता के लिए झूज रहे समुदाय हो या थर्ड जेंडर समुदाय, जैविक संरचना को लेकर हुई चर्चा इस संदर्भ में महत्त्वपुर्ण है। सामाजिक, आर्थिक सरंचना आदि से जुडी हुई समस्याएं इस वर्ग के जीवन को और दुष्कर बना देती है। डॉ. शरद सिंह ने इस समुदाय से जुड़ी समस्याओं को समग्रता से सामने रखने का प्रयास किया है, 'कई ऐसी बुनियादी बातें हैं, जो थर्ड जेंडर को परेशान करती हैं, जैसे, स्कूल, कॉलेजों एवं सार्वजनिक स्थानों में पृथक सुलभ शौचालय का न होना, शिक्षा का समान अवसर न मिलना, उनके विरुध्द अपमानजनक स्थितियों तथा अपराधों को रोकने के लिए अलग पुलिस थाना न होना, नौकरी का समान अवसर न मिलना।'[5] आज वैज्ञानिक एवं तकनिकी युग है, जिसमें किसी वर्ग विशेष को यदि किसी क्षेत्र में स्थान नहीं मिले तो यह दुःखद है, जबकी थर्ड जेंडर समुदाय के संदर्भ में कहा जा सकता है कि वह भी प्रतिभा संपन्न है। थर्ड जेंडर सामुदायिक सामाजिक कार्यकर्ता रबीना बरिहा इस संदर्भ में लिखती हैं, 'कई कलात्मक प्रतिभा और गुणों से पूर्ण होने के बावजूद हमारा वर्ग सामाजिक भेदभाव के चलते अपनी पहचान और विकास के लिए आज भी तरस रहा है। कितनी विडम्बना है

कि प्रगतिवादी व वैज्ञानिक विचारधारा से प्रभावित समाज में भी अपने मूलभूत अधिकरों को पाने के लिए अत्यंत पीड़ादायी संघर्ष कर रहे है। संविधान के मौलिक अधिकरों को सभी नागरिकों के बुनियादी अधिकार के रुप में परिभाषित किया गया है, लेकिन सामाजिक स्वीकार्यता नहीं होने के चलते उन अधिकरों को पाना तो दूर, अपने आपको प्यार करना भी भूल जाते हैं। [6] प्रकृती ने यदी लिंग की दृष्टीसे सामान्य मनुष्य नहीं बनाया तो क्या वे मानवीय अधिकार के हकदार नहीं? सामाजिक वास्तविकता इस वर्ग के संदर्भ में अत्यंत दुःखदायी है।

कुल मिलाकर थर्ड जेंडर के जीवन और उससे जुड़ी समस्याओं पर विमर्श की शुरुवात हो चुकी है। भविश्य में जब इस समाज द्वारा मानवीय अधिकारों की लड़ाई व्यापक स्तर पर लड़ी जाएगी तो समाज भी उसी के अनुसार उन्हें स्वीकार करेगा। थर्ड जेंडर समुदाय को भी मानवीय अधिकार, समानता, स्वतंत्रता, सम्मान आदि अवश्य मिलेगा अस्मिता की यह लडाई, जो 'थर्ड जेंडर' के द्वारा लड़ी जा रही है। उसे अभी भी एक लंबा रास्ता तय करना हैं।

संदर्भ :

1. विजेंद्र प्रताप सिंह, जनकृति, अगस्त, 2016
2. डॉ. शरद सिंह, सागर दिनकर, थर्ड जेंडर के पक्ष में साहित्यिक विमर्श की घोषणा, 27 जुलाई,2010
3. स्वतंत्र मिश्र, 'किन्नर अब थर्ड जेंडर' की तरह पहचाने जाएगें', जनकृति, संपादकीय, अंक–18, अगस्त, 2016
4. स्वतंत्र मिश्र, 'किन्नर अब थर्ड जेंडर' की तरह पहचाने जाएगें', जनकृति, संपादकीय, अंक–18, 2अगस्त, 2016
5. डॉ. शरद सिंह, सागर दिनकर, 27 जुलाई, 2010
6. रवीना बरिहा, 'जुड़ाव जब सकारात्मक हो तो एक आदर्श समाज बनता है,' जनकृति, संपादकीय, अंक–18,2 अगस्त, 2016